विचार बिन्दु

अपमानपूर्ण जीवन से मृत्यु अच्छी है। –कहावत

खाद की मारामारी नहीं, उर्वरक नीति पर पुनर्विचार की आवश्यकता

राजस्थान सहित देश के अनेक राज्यों में इन दिनों उर्वरकों की भारी कमी से किसान परेशान हैं। हाल ही में बारां जिले में हजारों किसानों को खाद प्राप्त करने के लिए घंटों तक कड़ी धूप में कतारों में खड़ा रहना पड़ा। खेल मैदान में पुलिस एवं कृषि अधिकारियों की निगरानी में टोकन वितरित किए गए और किसानों को मात्र दो-दो बैग खाद उपलब्ध कराई गई। यही स्थिति हाड़ौती क्षेत्र के छबड़ा और छीपाबड़ौद, डीग, ब्यावर, पाली, जैतारण, मसूदा, प्रतापगढ़ तथा टोंक सहित अनेक क्षेत्रों में देखने को मिल रही है। कहीं लंबी कतारें हैं, कहीं धक्का-मुक्की और अफरा-तफरी, तो कहीं कालाबाजारी के आरोपों के कारण विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं।

राज्य सरकार का दावा है कि खरीफ सीजन के लिए पर्याप्त उर्वरक उपलब्ध हैं, किंतु जमीनी हकीकत इससे अलग दिखाई देती है। जब किसी वस्तु की मांग उसकी उपलब्धता से अधिक हो जाती है, तब कालाबाजारी और अव्यवस्था स्वाभाविक रूप से जन्म लेती है। वर्तमान स्थिति इसी आर्थिक सिद्धांत का प्रत्यक्ष उदाहरण है। यह समस्या केवल राजस्थान तक सीमित नहीं है, बल्कि देश के अनेक राज्यों में किसान उर्वरकों की कमी से जूझ रहे हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी किसानों से प्राकृतिक खेती अपनाने तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करने का आव्हान कर रहे हैं। निस्संदेह प्राकृतिक खेती पर्यावरण संरक्षण और मृदा स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, परंतु यह भी विचारणीय है कि क्या केवल प्राकृतिक खेती के माध्यम से 145 करोड़ आबादी वाले देश की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति संभव है?

स्वतंत्रता के बाद के प्रारंभिक दशकों में भारत में मुख्यत: प्राकृतिक खेती ही प्रचलित थी। उस समय देश की जनसंख्या लगभग 35 करोड़ थी, फिर भी खाद्यान्न उत्पादन पर्याप्त नहीं था और भारत को विदेशी सहायता एवं आयातित अनाज पर निर्भर रहना पड़ता था। हरित क्रांति के बाद उन्नत बीजों, सिंचाई सुविधाओं और रासायनिक उर्वरकों के संतुलित उपयोग ने देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया। आज भारत विश्व के प्रमुख खाद्यान्न उत्पादक देशों में शामिल है।

अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि भारत में रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग हो रहा है और इससे भूमि की उर्वरा शक्ति प्रभावित हो रही है। किंतु अंतरराष्ट्रीय आंकड़ों पर दृष्टि डालें तो स्थिति कुछ भिन्न दिखाई देती है। वियतनाम में लगभग 420 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर, चीन में 394 किलोग्राम, बांग्लादेश में 392 किलोग्राम तथा इंडोनेशिया में 311 किलोग्राम उर्वरकों का उपयोग होता है, जबकि भारत में यह आंकड़ा लगभग 199 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है। अत: यह कहना उचित नहीं होगा कि भारत उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग करने वाले देशों में शामिल है। आवश्यकता रासायनिक एवं जैविक खादों के संतुलित उपयोग की है, न कि किसी एक को पूर्णत: त्याग देने की।

पिछले पांच दशकों के कृषि इतिहास पर नजर डालें तो उर्वरक खपत और खाद्यान्न उत्पादन के बीच स्पष्ट एवं सकारात्मक संबंध दिखाई देता है। 1970 के दशक में जहां उर्वरकों की खपत लगभग 5 लाख मीट्रिक टन और खाद्यान्न उत्पादन लगभग 100 मिलियन टन था, वहीं आज उर्वरकों की खपत कई गुना बढ़ने के साथ खाद्यान्न उत्पादन भी लगभग 376 मिलियन टन तक पहुंच गया है। कृषि सांख्यिकी के आंकड़े दर्शाते हैं कि दोनों का विकास लगभग समानांतर रूप से हुआ है। ऐसे में यदि बिना पर्याप्त विकल्प उपलब्ध कराए उर्वरकों के उपयोग में 20 प्रतिशत कमी की जाती है, तो इसका प्रतिकूल प्रभाव उत्पादन पर पड़ सकता है।

> **किसान देश का अन्नदाता है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार किसानों को पर्याप्त मात्रा में उर्वरक उपलब्ध कराने के साथ-साथ ऐसी दीर्घकालिक रणनीति तैयार करे, जिससे खाद्य सुरक्षा, मृदा स्वास्थ्य और किसान हित-तीनों के बीच संतुलन स्थापित किया जा सके। तभी कृषि क्षेत्र वास्तव में आत्मनिर्भर और टिकाऊ बन पाएगा।**

नैनो यूरिया को लेकर भी अनेक प्रश्न उठ रहे हैं। सरकार और उर्वरक कंपनियां दावा करती हैं कि नैनो यूरिया की एक बोतल पारंपरिक यूरिया की एक बोरी के बराबर प्रभावी है, किंतु इस दावे पर कृषि वैज्ञानिकों और किसानों के एक वर्ग द्वारा गंभीर आपत्तियां व्यक्त की जा रही हैं। एक नैनो यूरिया की बोतल में लगभग 20 ग्राम नाइट्रोजन होती है, जबकि 45 किलोग्राम की एक यूरिया बोरी में लगभग 20.7 किलोग्राम नाइट्रोजन उपलब्ध होती है। ऐसे में दोनों की प्रत्यक्ष तुलना को लेकर वैज्ञानिक बहस जारी है। कई कृषि विशेषज्ञों का मत है कि नैनो यूरिया पारंपरिक यूरिया का पूर्ण विकल्प नहीं बन सकता, बल्कि इसे केवल पूरक उत्पाद के रूप में ही देखा जाना चाहिए। पंजाब एवं हरियाणा में हुए कुछ परीक्षणों और किसानों के अनुभवों के आधार पर यह भी दावा किया गया है कि केवल नैनो यूरिया पर निर्भर रहने से फसल उत्पादन में कमी देखी गई। किसानों की शिकायत है कि उर्वरक खरीदते समय कई स्थानों पर उन्हें लगभग 300 रुपये मूल्य की नैनो यूरिया की बोतल अनिवार्य रूप से खरीदने के लिए प्रेरित अथवा बाध्य किया जाता है। यदि यह सत्य है, तो यह स्थिति किसानों पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ डालने वाली है। सरकार और वैज्ञानिक संस्थानों को चाहिए कि वे नैनो यूरिया की प्रभावशीलता पर स्वतंत्र एवं पारदर्शी अध्ययन सार्वजनिक करें तथा किसानों को किसी भी उत्पाद को अपनाने के लिए बाध्य करने के बजाय वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर निर्णय लेने की स्वतंत्रता दें।

देश में उर्वरकों की कुल वार्षिक मांग लगभग 6.5 करोड़ टन है, जबकि घरेलू उत्पादन इससे कम है। परिणामस्वरूप भारत को बड़ी मात्रा में उर्वरकों का आयात करना पड़ता है। वैश्विक भू-राजनीतिक तनाव, आपूर्ति शृंखला में व्यवधान तथा अंतरराष्ट्रीय बाजार में अस्थिरता का सीधा प्रभाव भारतीय किसानों पर पड़ता है। यही कारण है कि समय-समय पर उर्वरकों की उपलब्धता संकटग्रस्त हो जाती है।

उर्वरकों की समस्या का स्थायी समाधान केवल अस्थायी वितरण व्यवस्थाओं या टोकन प्रणाली में नहीं, बल्कि दीर्घकालिक नीतिगत सुधारों में निहित है। देश में यूरिया, डीएपी और पोटाश के घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए नए संयंत्र स्थापित किए जाने चाहिए। निजी निवेश को प्रोत्साहित करने वाली नीतियां बनाई जानी चाहिए ताकि भारत आयात पर निर्भरता कम कर सके। साथ ही, जैविक खाद, गोबर खाद, हरी खाद और रासायनिक उर्वरकों के संतुलित उपयोग को बढ़ावा देने वाली समन्वित कृषि नीति अपनाई जानी चाहिए।

किसान देश का अन्नदाता है। यदि उसे खाद के लिए घंटों कतारों में खड़ा होना पड़े, तो यह केवल आपूर्ति व्यवस्था की विफलता नहीं बल्कि कृषि नीति के लिए भी एक गंभीर चेतावनी है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार किसानों को पर्याप्त मात्रा में उर्वरक उपलब्ध कराने के साथ-साथ ऐसी दीर्घकालिक रणनीति तैयार करे, जिससे खाद्य सुरक्षा, मृदा स्वास्थ्य और किसान हित-तीनों के बीच संतुलन स्थापित किया जा सके। तभी कृषि क्षेत्र वास्तव में आत्मनिर्भर और टिकाऊ बन पाएगा।

–अतिथि सम्पादक,
प्रो. पी. सी. कंठालिया, पूर्व मुख्य मृदा वैज्ञानिक
महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

राशिफल गुरूवार 25 जून, 2026

पंडित अनिल शर्मा

द्वितीय ज्येष्ठ मास (शुद्ध), शुक्ल पक्ष, एकादशी तिथि, गुरूवार, विक्रम संवत 2083, स्वाती नक्षत्र सायं 4:29 तक, शिव योग दिन 10:54 तक, वणिज करण प्रात: 7:11 तक, चन्द्रमा आज तुला राशि में संचार करेगा।

ग्रह स्थिति: सूर्य-मिथुन, चन्द्रमा-तुला, मंगल-वृष, बुध-कर्क, गुरू-कर्क, शुक्र-कर्क, शनि-मीन, राहु-कुम्भ, केतु-सिंह

आज रवियोग सायं 4:29 तक है। भद्रा प्रात: 7:11 से रात्रि 8:10 तक रहेगी। आज निर्जला एकादशी व्रत, भौम एकादशी, गायत्री जयन्ती, रुकमणि विवाह है। आज कतल की रात है।

श्रेष्ठ चौघड़िया: शुभ सूर्योदय से 7:21 तक, चर 10:47 से 12:29 तक, लाभ अमृत 12:29 से 3:55 तक, शुभ 5:37 से सूर्यास्त तक।

राहूकाल: 1:30 से 3:00 तक। सूर्योदय 5:38, सूर्यास्त 7:20

मेष

परिवार में आपसी सहयोग-समन्वय बना रहेगा। शुभ-धार्मिक-मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। परिवार में सुख-सुविधाएं बढ़ेगी। अतिथियों के आगमन से उत्सव जैसा माहौल रहेगा।

सिंह

परिवार में मन को प्रसन्न करने वाले संदेश प्राप्त होंगे। मित्रों/रिश्तेदारों के सहयोग से वर्तमान समस्या का समाधान हो सकता है। व्यावसायिक यात्रा संभव है।

धनु

आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। अटका हुआ धन प्राप्त हो सकता है। व्यावसायिक मामलों में लापरवाही ठीक नहीं रहेगी। परिवार में स्वास्थ्य संबंधित मामलों में परेशानी हो सकती है।

वृष

मित्रों/परिजनों से चल रहे आपसी मतभेद दूर होने लगेंगे। अस्त-व्यस्त दिनचर्या में सुधार होगा। विवादित मामलों से राहत मिल सकती है। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

कन्या

आर्थिक मामलों के लिए दिन अच्छा रहेगा। आय में वृद्धि होगी। संभावित स्त्रोत से धन प्राप्त होगा। व्यावसायिक कार्यों में प्रगति होगी। महत्वपूर्ण कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा।

मकर

व्यावसायिक कार्यों पर ध्यान देना ठीक रहेगा। अटके हुए कार्य शीघ्रता/सुगमता से बनने लगेंगे। नवीन कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा। परिवार में धार्मिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं।

मिथुन

परिवार में धार्मिक-मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। आज समय रचनात्मक कार्यों में व्यतीत होगा। महत्वपूर्ण कार्यों के संबंध में उचित सोच-विचार हो सकता है।

तुला

व्यावसायिक कार्यों में व्यस्तता यथावत बनी रहेगी। नौकरीपेशा व्यक्तियों का प्रभाव-प्रभुत्व बढ़ेगा। व्यावसायिक सफलता से मनोबल बढ़ेगा। आर्थिक स्थिति में सुधार होगा।

कुंभ

धार्मिक-मांगलिक कार्यों में भाग ले सकते हैं। धार्मिक स्थान की यात्रा संभव है। परिवार में महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

कर्क

घर-परिवार में सुख-सुविधाओं में वृद्धि होगी। परिवार में महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। धार्मिक कार्यों में भाग ले सकते हैं। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

वृश्चिक

धार्मिक कार्यों में भाग ले सकते हैं। धार्मिक स्थान की यात्रा संभव है। घर-गृहस्थी के खर्चों में अनावश्यक वृद्धि हो सकती है। आज समय अनर्गल कार्यों में खराब होगा।

मीन

चन्द्रमा अष्टम भाव में शुभ नहीं है। शुभ कार्यों में व्यवधान हो सकता है। आवश्यक कार्यों में विलम्ब हो सकता है। बनते कार्य बिगड़ सकते हैं। यात्रा में परेशानी हो सकती है।

51 वर्षों का काला दिवस - लोकतंत्र की काली यादें

डॉ. मनीषा सिंह

25 जून 1975, यह वह दिनांक है जिसने भारतीय लोकतंत्र के इतिहास पर एक ऐसा काला धब्बा लगाया, जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। इस दिन देश में द इमरजेंसी (1975-1977) लागू किया गया, और इसके साथ ही भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त नागरिकों के मूल अधिकारों को लगभग समाप्त कर दिया गया। यह समय केवल एक राजनीतिक घटना नहीं था, बल्कि लोकतंत्र की आत्मा पर एक गंभीर आघात था।

आपातकाल का दौर भारतीय इतिहास का वह अध्याय है, जब सत्ता के केंद्रीकरण ने लोकतंत्र की जड़ों को हिलाकर रख दिया। उस समय देश में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर पूर्ण रूप से रोक लगा दी गई। मीडिया, जो लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है, उसे सरकार के नियंत्रण में कर दिया गया। अखबारों को छापने से पहले सरकारी सेंसरशिप से गुजरना पड़ता था, और जो भी सरकार के खिलाफ लिखता या बोलता, उसे कठोर परिणाम भुगतने पड़ते थे। इस दौरान हजारों राजनीतिक नेताओं, पत्रकारों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और आम नागरिकों को बिना किसी न्यायिक प्रक्रिया के जेल में डाल दिया गया। केवल विरोध की आवाज उठाना ही अपराध बन गया था। लोकतंत्र में असहमति को स्थान मिलता है, लेकिन उस समय असहमति को कुचलने का हर संभव प्रयास किया गया। इतना ही नहीं, इस कालखंड में कई अमानवीय निर्णय भी लिए गए, जिनमें जबरन नसबंदी अभियान प्रमुख था। लाखों लोगों को बिना उनकी सहमति के इस प्रक्रिया से गुजरने के लिए मजबूर किया गया। यह केवल प्रशासनिक विफलता नहीं, बल्कि मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन था।

न्यायपालिका, जो लोकतंत्र की रक्षा की अंतिम उम्मीद होती है, उस पर भी दबाव बनाया गया। संस्थाओं की स्वतंत्रता को सीमित कर दिया गया, जिससे शासन के खिलाफ कोई प्रभावी आवाज नहीं उठ सकी। यह स्थिति दर्शाती है कि जब सत्ता निरंकुश हो जाती है, तो वह लोकतंत्र के सभी स्तंभों को कमजोर कर सकती है। आज, जब हम इस काला दिवस के 51 वर्ष पूरे होने पर पीछे मुड़कर देखते हैं, तो यह केवल इतिहास का स्मरण नहीं है, बल्कि एक महत्वपूर्ण सीख भी है। यह हमें याद दिलाता है कि लोकतंत्र केवल संविधान या कानूनों से नहीं चलता, बल्कि जनता की जागरूकता और भागीदारी से मजबूत होता है।

विशेष रूप से युवाओं के लिए यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि स्वतंत्रता और अधिकारों की रक्षा के लिए सतत संघर्ष करना पड़ता है। इतिहास ऐसे काले अध्याय हमें यह सिखाते हैं कि सत्ता का दुरुपयोग किस प्रकार एक पूरे देश को अंधकार में धकेल सकता है। यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि हम उन गलतियों को दोहराने से बचें। लोकतंत्र में सत्ता परिवर्तन स्वाभाविक है, लेकिन मूल्यों और सिद्धांतों का संरक्षण सबसे ऊपर होना चाहिए। जब भी कोई शासन जनता की आवाज को दबाने का प्रयास करता है, तो वह लोकतंत्र के मूल स्वरूप को कमजोर करता है। काला दिवस केवल अतीत की एक घटना नहीं, बल्कि एक चेतावनी है, एक ऐसा संदेश है जो हमें सतर्क रहने के लिए प्रेरित करता है। यह हमें याद दिलाता है कि अगर हम अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के प्रति सजग नहीं रहेंगे, तो इतिहास स्वयं को दोहरा सकता है। अंतत:, 25 जून 1975 का दिन हमें यह सिखाता है कि लोकतंत्र की रक्षा केवल सरकार की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि हर नागरिक का कर्तव्य है। हमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक रहना होगा और किसी भी प्रकार की तानाशाही प्रवृत्ति के खिलाफ खड़े होना होगा। इसी संकल्प के साथ, हम इस 51 वर्षों के काला दिवस पर उन काली यादों को याद करते हैं और यह प्रण लेते हैं कि लोकतंत्र की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहेंगे।

–डॉ. मनीषा सिंह,
प्रदेश प्रवक्ता भाजपा,
राजस्थान

अहंकार, तानाशाही, राज-लिप्सा का सम्मिश्रण आपातकाल

पंकज मीणा

संविधान निर्माताओ ने देश का संविधान बनाते समय यूरोप के कई देशों के संविधान का अध्ययन किया था। कुछ आलोचक आरोप भी लगते हैं कि हमारा संविधान यूरोपीय देश के संविधानों की नकल मात्र है। भारत के संविधान में अनुच्छेद 352 'राष्ट्रीय आपातकाल' जर्मनी के वाइमर संविधान से प्रभावित होने के भी आरोप आलोचक लगाते हैं। संविधान सभा में समाजवादी नेता एचबी कामथ ने वाइमर संविधान के आपातकाल और अनुछेद 352 में समानता की ओर ध्यान आकर्षित भी किया था, परंतु डॉ. अंबेडकर ने हिटलर द्वारा वाइमर संविधान के दुरुपयोग जैसी स्थिति से बचने के लिए हमारे संविधान में न्यायिक समीक्षा और संसदीय जवाबदेही पर अधिक जोर दिया।

संविधान सभा द्वारा हिटलर के आपातकालीन शक्तियों के दुरुपयोग के अनुभवों से सबक लेकर संस्थागत संतुलन को अपनाया, परंतु तमाम सावधानियों को दरकिनार कर अहंकारी इंदिरा गांधी ने 25 जून, 1975 को हिटलर का वही रास्ता व रणनीति अपनाकर संविधान अंगीकार के मात्र 25 वर्ष बाद ही संविधान की धज्जियां उड़ाने का काम किया। शासन के प्रति विरोध को भी समान महत्व दिए जाने के लिए भारत के संविधान में न्यायपालिका को मजबूत बनाया गया। प्रेस को स्वतंत्र बनाया गया और विपक्ष को सम्मान महत्व दिया गया, परंतु आपातकाल घोषित कर इंदिरा गांधी ने प्रेस की स्वतंत्रता छीन ली, न्यायपालिका को पंगु बना दिया और विपक्ष को जबरन जेल में डाल दिया।

आपातकाल में विपक्ष के सभी नेताओं को जेल में डाल दिया वहीं इंदिरा गांधी की तानाशाही का यह आलम था कि कांग्रेस के जो नेता इंदिरा से असहमति रखते थे, उन्हें भी जेल में ठूस दिया। मोरारजी देसाई जिन्होंने नेहरू के साथ स्वतंत्रता संघर्ष में भाग लिया उन्हें व्यक्तिगत अदावत के कारण जेल भेज दिया। इस पर चंद्रशेखर, मोहन घाटिया जैसे वरिष्ठ कांग्रेस के नेता भी इंदिरा गांधी के कोपभाजन के शिकार हुए। आपातकाल से पहले ही देश में अराजकता के हालात हो चुके थे, इन अराजक स्थिति के विरुद्ध बिहार में छात्रों का जबरदस्त आंदोलन चल रहा था, तो वही गुजरात विधानसभा चुनाव में कांग्रेस की करारी हार हो गई थी। कांग्रेस के अंदर भी असक्षम इंदिरा गांधी के नेतृत्व को लेकर विरोधी स्वर उठने लगे थे। ऐसे समय में इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा इंदिरा गांधी के चुनाव को रद्द घोषित कर देना, 'भारत में राज करना अपना तो अधिकार समझने वाले परिवार' की नेता को यह सब कैसे बर्दाश्त होता। एक तरफ भयग्रस्त इंदिरा गांधी व छिन्न-भिन्न कांग्रेस, दूसरी तरफ देश के अराजक स्थितियों के विरुद्ध संपूर्ण विपक्ष एकत्र होना शुरू हुआ और देश के सबसे बड़े समाजवादी नेता लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने संपूर्ण क्रांति की घोषणा कर दी। जब इंदिरा गांधी को सत्ता हाथ से फिसलती हुई दिखी। हिटलर से प्रभावित इंदिरा गांधी की ऐसे में अनुच्छेद 352 के दुरुपयोग का आसान रास्ता देख कांग्रेस पार्टी, कैबिनेट, शासकीय व्यवस्था के घटकों को विश्वास में लिए बिना राष्ट्रपति से दबाव पूर्ण तरीके से लोकतंत्र के काले अध्याय आपातकाल के आदेश पर हस्ताक्षर करवाए गए।

आज देश में संविधान की किताबें लहराने वालों के पास आपातकाल के लिए न तो माफी के शब्द है और ना ही पश्चाताप के। 21 महीने के आपातकाल में कुल एक लाख दस हजार लोगों मीसा तथा डीआरआई में गिरफ्तार किया गया। जिसमें 90 प्रतिशत संख्या जन संघ अथवा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक की थी। राजनीतिक बंदी को मिलने वाली सुविधाओं से विपरीत संघ के स्वयंसेवकों को जेल में यातनाएं दी गई। कांग्रेस और उनके नेता राहुल गांधी वास्तविकता में भारत के संविधान व लोकतंत्र के पेरोकार हैं तो सबसे पहले उन्हें अपनी दादी के कृत्य पर देश की जनता से क्षमा मांगनी चाहिए और देश में जनता को विश्वास दिलाना चाहिए भारतीय लोकतंत्र का वह काला अध्याय दोहराया नहीं जाएगा।

–पंकज मीणा,
प्रदेश प्रवक्ता भाजपा
राजस्थान

क्या आज़ादी से बोलने, असहमति और दल-बदल के लिए कोई लक्ष्मण रेखा है?

सूर्यप्रतापसिंह राजावत

टीएमसी से अलग हुए गुट का एनसीपीआइ में विलय कई कानूनी, संवैधानिक, वैधानिक और राजनीतिक नैतिकता से जुड़े सवाल खड़े करता है। एक सोच यह है कि जो काम संविधान की इजाज़त से हो रहा है, क्या उस पर राजनीतिक नैतिकता के आधार पर सवाल उठाया जा सकता है? इसका जवाब सीधा है: राजनीति में चुनाव अच्छे और बुरे के बीच नहीं होता, बल्कि यह तय करना होता है कि कम बुरा क्या है। साथ ही, इस बहस का एक अहम पहलू लोकतंत्र में जवाबदेही तय करना भी है।

कानूनी तौर पर, मूल राजनीतिक पार्टी और लेजिस्लेटिव पार्टी (विधायिका में पार्टी) के बीच अंतर है। संविधान (52वां संशोधन) अधिनियम, 1985 के ज़रिए जोड़ी गई 10वीं अनुसूची की संवैधानिक व्यवस्था, पैरा 1(बी) के तहत मूल राजनीतिक पार्टी और पैरा 1(सी) के तहत लेजिस्लेटिव पार्टी की अलग पहचान और अस्तित्व को साफ़ तौर पर मानती है। आज़ादी से बोलने, असहमति और दल-बदल पर बहस तब तक अधूरी रहेगी और उसे सही ढंग से नहीं समझा जा सकेगा, जब तक कि संविधान की 10वीं अनुसूची के साथ-साथ जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, विधानसभा के नियम, संसद के नियम, चुनाव चिह्न (आरक्षण और आवंटन) आदेश, 1968 और स्पीकर या चेयरमैन (जैसा भी मामला हो) तथा भारत के चुनाव आयोग की भूमिका को न पढ़ा जाए। इसके बाद, हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट में क्रमश: अनुच्छेद 226 और अनुच्छेद 32 के तहत रिट अधिकार क्षेत्र के ज़रिए विवादित आदेश की न्यायिक समीक्षा की जाती है। 10वीं अनुसूची के लागू होने के बाद से आए कई फैसलों और कमिटी की रिपोर्टों को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। व्हिप की भूमिका बहुत अहम होती है; वह राजनीतिक पार्टी और विधायिका के बीच एक नाल (umbilical cord) की तरह काम करता है। साथ ही, लेजिस्लेटिव पार्टी के नेता की भूमिका की भी बारीकी से जांच ज़रूरी है। संविधान की दसवीं अनुसूची के पैरा 3 पर चर्चा ज़रूरी है, क्योंकि 91वें संशोधन अधिनियम, 2003 द्वारा हटाए जाने के बावजूद इसने दसवीं अनुसूची की असली योजना को प्रभावित किया है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पहले पैरा 3 में स्प्लिट (पार्टी टूटने) और अलग हुए गुट को मान्यता देने का प्रावधान था। पैरा 3 के हटाए जाने के बाद, अयोग्यता की कार्यवाही का सामना कर रहे सदस्यों के पास अब स्प्लिट का बचाव उपलब्ध नहीं है। दसवीं अनुसूची का पैरा 2 दल-बदल के आधार पर अयोग्यता तय करता है, जबकि पैरा 4 में विलय के आधार पर कुछ अपवाद दिए गए हैं। भारत के संविधान की प्रस्तावना में लोकतंत्र की घोषणा की गई है। इसके अलावा, अनुच्छेद 19 के तहत मौलिक अधिकार बोलने और अभिव्यक्ति की आज़ादी की गारंटी देते हैं। यह अधिकार केवल भारत के नागरिकों को मिलता है, लेकिन इस पर उचित प्रतिबंध भी हो सकते हैं। राजनीतिक दलों से उम्मीद की जाती है कि वे पार्टी के कामकाज में आज़ादी से बोलने और असहमति जताने की अनुमति दें। क्या किसी विधायक या सांसद को अपनी मूल पार्टी से असहमति के कारण निकाले जाने पर उसकी सदस्यता से वंचित किया जा सकता है? सुप्रीम कोर्ट ने अमर सिंह बनाम भारत संघ (2011) मामले में इस मुद्दे को बड़ी बेंच के पास भेजा था। सवाल यह था कि अगर संसद के किसी सदन के सदस्य को उस पार्टी ने निकाल दिया है जिसने उसे चुनाव में उम्मीदवार बनाया था, और वह सदस्य किसी दूसरी पार्टी में शामिल हो जाता है या अपनी पार्टी बना लेता है, तो क्या दसवीं अनुसूची के पैरा 2(1) के स्पष्टीकरण (ए) में बनाई गई कानूनी धारणा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उसने स्वेच्छा से पार्टी की सदस्यता छोड़ दी है?चुनावी सुधारों पर बनी समिति की रिपोर्ट, जिसे आमतौर पर दिनेश गोस्वामी रिपोर्ट, 1990 के नाम से जाना जाता है, ने सिफारिश की थी कि दसवीं अनुसूची में दल-बदल विरोधी कानून में निम्न पहलुओं के संबंध में बदलाव किया जाना चाहिए:

(1.) अयोग्यता के प्रावधान विशेष रूप से इन मामलों तक सीमित होने चाहिए: (ए) किसी चुने हुए सदस्य द्वारा स्वेच्छा से राजनीतिक दल की सदस्यता छोड़ना और (बी) किसी सदस्य द्वारा अपनी पार्टी के निर्देश या व्हिप के खिलाफ वोट देना या वोटिंग से दूर रहना, लेकिन यह केवल विश्वास मत, अविश्वास प्रस्ताव, मनी बिल या राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव के मामले में ही लागू हो।

राजनीतिक पार्टी के किस गुट को असली पार्टी माना जाए, इस विवाद को देखते हुए स्पीकर दोहरी भूमिका निभाते हैं: वे शेड्यूल 10 के तहत याचिका पर फैसला करते समय ट्रिब्यूनल की भूमिका निभाते हैं और सदन की कार्यवाही चलाते समय विधायिका के सबसे बड़े अधिकारी की तरह काम करते हैं। टीएमसी के एक अलग हुए गुट ने एनसीपीआई नाम की कम जानी-पहचानी राजनीतिक पार्टी में विलय की घोषणा की है। शेड्यूल 10 के पैरा 4(1)(ए) और 4(2) के तहत ऐसा करना जायज है, क्योंकि यह गुट असली राजनीतिक पार्टी का प्रतिनिधित्व करने का दावा करता है।

मुख्य सवाल यह है कि क्या विलय करने वाला गुट यह दावा कर सकता है कि वही असली टीएमसी है और ममता बनर्जी के नेतृत्व वाले गुट को पार्टी का चुनाव चिह्न इस्तेमाल नहीं करने दिया जाए, क्योंकि ममता का गुट पैरा 4(1)(ए) के अनुसार विलय के समर्थन में नहीं है? इसका जवाब हाँ में है। ऐसा दो वजहों से है। पहली, विधायक दल के दो-तिहाई सदस्यों ने एनसीपीआई के साथ विलय की घोषणा की है। दूसरी, अगर ममता विलय का विरोध करती हैं, तो सादिक अली केस (1972) के अनुसार, ममता के नेतृत्व वाले गुट के दावे पर भारत का चुनाव आयोग फैसला करेगा। पैरा 15 (मान्यता प्राप्त राजनीतिक पार्टी के अलग हुए गुटों या विरोधी गुटों के संबंध में आयोग की शक्ति) के तहत विवाद को सुलझाने के लिए इसीआई को तीन शर्तें सुझाई गई हैं, साथ ही विवाद पर फैसला करने के लिए अन्य पैमाने तय करने की छूट भी दी गई है। ये तीन शर्तें हैं: पहला, राजनीतिक पार्टी के लक्ष्य और उद्देश्य; दूसरा, पार्टी का संविधान; और तीसरा, बहुमत का परीक्षण। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, अलग हुए गुट को लोकसभा में विधायक दल और टीएमसी पार्टी में बहुमत हासिल है। साथ ही, इसीआई के सामने फैसले के लिए बहुमत के परीक्षण में दो-तिहाई बहुमत की जरूरत नहीं है, बल्कि साधारण बहुमत ही काफी होगा। इसलिए, अलग हुआ गुट भारत के चुनाव आयोग के सामने केस जीतने को लेकर आश्वस्त है। अन्य दो पैमानों की बात करें तो उनका कोई खास महत्व नहीं है, क्योंकि दोनों ही पक्ष पार्टी संविधान के लक्ष्यों और उद्देश्यों के प्रति निष्ठा का दावा करेंगे।

पार्टी संविधान के तहत लोकतांत्रिक कामकाज की बात करें तो ममता के काम करने का तरीका कामकाज में लोकतंत्र के लिए कोई जगह नहीं छोड़ता। इसलिए इस पैमाने पर विचार नहीं किया जा सकता। शिव सेना, एनसीपी वगैरह के मामलों से जुड़े पिछले विवादों में यही ट्रेंड रहा है। इसलिए, मौजूदा विवाद का फ़ैसला बहुमत के तीसरे टेस्ट से ही होगा। इस तरह, अलग हुए गुट को टीएमसी के नाम से असली राजनीतिक पार्टी के तौर पर मान्यता मिल जाएगी। इसलिए, संविधान के पैरा 4(ए) के तहत, अलग हुए गुट को असली पार्टी के तौर पर मान्यता मिलने और लोकसभा में लेजिस्लेचर पार्टी के दो-तिहाई सदस्यों का समर्थन होने की वजह से (जैसा कि ऊपर बताया गया है), उन पर दल-बदल विरोधी (anti-defection) कार्रवाई नहीं होगी। अब, पैरा 4(1)(बी) के तहत, ममता के नेतृत्व वाले गुट को - जिसने विलय का विरोध किया है - एक अलग गुट के तौर पर काम करने की इजाज़त होगी। नतीजा यह होगा कि ऐसा अलग गुट रिप्रेज़ेंटेशन ऑफ़ द पीपुल एक्ट 1951 की धारा 29ए के तहत नई राजनीतिक पार्टी के तौर पर मान्यता के लिए आवेदन कर सकता है।

–सूर्यप्रतापसिंह राजावत,
अधिवक्ता, राजस्थान
हाईकोर्ट, जयपुर

थार के मरुस्थल में स्थापत्य का सम्मोहन : जब पटुवा हवेली की नक्काशी देख विस्मित रह गईं ब्रिटिश राजकुमारी

अचलदास डांगरा

विशेष वर्ष 1984 का वह अक्टूबर का महीना जैसलमेर के इतिहास में हमेशा के लिए दर्ज हो गया, जब ब्रिटेन के शाही परिवार की सदस्य प्रिंसेस एन थार के इस सुनहरे शहर की मेहमान बनीं। अपनी 15 दिवसीय भारत यात्रा के दौरान 30 अक्टूबर 1984 को जब वे जैसलमेर पहुंचीं, तो यहां की मरुस्थलीय संस्कृति और स्थापत्य ने उन्हें पूरी तरह अपने सम्मोहन में ले लिया। लेकिन इस पूरी यात्रा का सबसे भावुक और कलात्मक शिखर वह पल था, जब राजकुमारी ने जैसलमेर की विश्व प्रसिद्ध पटुवा हवेली की चौखट पर कदम रखा। पीले पत्थरों पर उकेरी गई इतिहास की इस बेजोड़ किताब को देखना राजकुमारी के लिए एक चमत्कारी अनुभव जैसा था। इस भव्य हवेली के निर्माण का इतिहास थार के मरुस्थल में व्यापार और समृद्धि के उस स्वर्ण काल की याद दिलाता है जब जैसलमेर सिल्क रूट का एक मुख्य केंद्र हुआ करता था। इस हवेली का निर्माण 19वीं सदी की शुरुआत में, वर्ष 1805 के आसपास जैसलमेर के अत्यंत धनी और प्रतिष्ठित व्यवसायी गुमानचंद पटवा ने शुरू करवाया था। सोना, चांदी, जरी और अफीम के अंतरराष्ट्रीय व्यापारी गुमानचंद ने अपने पांच बेटों के लिए पांच हवेलियों के इस अनूठे समूह को आकार दिया। 50 वर्षों के अनवरत परिश्रम और सैकड़ों कुशल कारीगरों की कला साधना के बाद यह पांच मंजिला विशाल परिसर पूरी तरह बनकर तैयार हुआ। पीले बलुआ पत्थर से बनी इन पांचों हवेलियों को इस तरह जोड़ा गया है कि ये एक ही हवेली का हिस्सा प्रतीत होती हैं। इसकी दीवारों पर की गई नक्काशी, जटिल झरोखे और मेहराब इतने बारीक हैं कि लगता है मानो पत्थर पर छेनी नहीं, बल्कि किसी जौहरी ने सोने पर कलम चलाई हो। हवेली के इन्हीं झरोखों, बारीक जालियों और दीवारों पर की गई कांच की कारीगरी को निहारते हुए प्रिंसेस एन मंत्रमुग्ध खड़ी रह गईं। अपनी इस यात्रा के दौरान हवेली की भव्यता पर विस्मित होते हुए राजकुमारी ने अपने उद्गार व्यक्त किए थे:-

"यह पत्थरों पर नक्काशी नहीं, बल्कि पीले पत्थरों पर बुना गया कोई महीन सिल्क का कपड़ा लगता है। थार के इस सुदूर रेगिस्तान में ऐसा बेजोड़ स्थापत्य और मानवीय कौशल देखना किसी जादुई सपने से कम नहीं है। भारत की यह कलात्मक विरासत पूरी दुनिया के लिए एक अनमोल उपहार है।" राजकुमारी के ये शब्द सिर्फ औपचारिकता नहीं थे, बल्कि उस अगाध सम्मान का प्रतीक थे जो पश्चिमी जगत भारत की प्राचीन कारीगरी के प्रति रखता आया है। उस दौर में, जब पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के प्रयासों से इस हवेली को राष्ट्रीय धरोहर का दर्जा मिला ही था, प्रिंसेस एन के इस दौरे ने पटुवा हवेली को वैश्विक पर्यटन के मानचित्र पर एक नई ऊंचाई दे दी।आज दशकों बाद भी, जब देश-विदेश के लाखों सैलानी इन झरोखों से छनकर आती धूप को देखते हैं, तो उन्हें राजकुमारी एन के वे शब्द याद आते हैं। पटुवा हवेली सिर्फ पत्थर का ढांचा नहीं, बल्कि मानवीय जिजीविषा, कला और थार के गौरव की अमर गाथा है, जिसे देखकर वक्त भी ठहर जाता है।

–अचलदास डांगरा,
वरिष्ठ पत्रकार